महोबाकी जैन प्रतिमाएँ

शैलेन्द्रकुमार रस्तोगी
राष्ट्रीय संग्रहालय लखनऊ, उ० प्र०

प्राचीन 'महोत्सवनगर' आजकी जनभाषामें 'महोबा'के नामसे प्रसिद्ध है। यूं तो इस स्थलीका पूरा इतिहास ही गौरवमय रहा है, परन्तु चन्देलोंके समयमें तो यही प्रशासकीय राजधानी था।[1] ११८२ में यहीं पृथ्वीराज चौहानने अपनी विजय पताका फहरायी थी। १२०३ में कुतुबुद्दीन ऐबकने इसे जीत लिया। वीर काव्योंमें जनमानसके कंठहार आल्हाऊदलका नाम आज भी लोग बड़े जोशमें लेते दीख पड़ते हैं। महोबासे ब्राह्मण, जैन एवं बौद्ध कला कृतियाँ प्राप्त हुई हैं तथा अब भी वहाँ जमीनमें दबी पड़ी हैं। महोबा उत्तरप्रदेशके हम्मीरपुर जनपदमें अवस्थित है।

कला जगतमें महोबाका अनुपम स्थान है। यहींसे उपलब्ध सौन्दर्य एवं कलासे परिपूर्ण सारे विश्वको विमुग्ध कर लेनेवाली 'सिंहनाद अवलोकितेश्वर'की कीर्तिवर्म्मनके समयकी बनी प्रतिमासे कौन इतिहासज्ञ, पुराविद् एवं कला समीक्षक परिचित न होगा? यह कलारत्न राज्य संग्रहालय लखनऊके संग्रहकी अमूल्य निधि है।[2]

महोबासे जैनमन्दिरों एवं कलापूर्ण मूर्तियोंके अनेक अवशेष प्राप्त हुये हैं। चन्देल कालमें यह स्थान एक अच्छा जैन केन्द्र रहा है।[3] यहींसे संग्रहमें आयी १९०४ एवं १९३५ की जैन प्रतिमायें लखनऊ संग्रहालयको भेंटमें मिली थीं जिसमें तदानीन्तन जिलाधिकारियों तथा भारतीय पुरातत्त्व विभागके महानिदेशकोंका परामर्श सहायक रहा है। इन जैन प्रतिमाओंका विवेचन यहाँ किया जा रहा है। वैसे तो यहाँके संग्रहमें मथुराकी जैन मूर्तियाँ भी पर्याप्त हैं, किन्तु उनमें अधिकांश कुषाण एवं गुप्तकालीन हैं। ये प्रारम्भिक स्थितिका ज्ञान कराती हैं। मध्यकालीन जैन प्रतिमाओंका परिचय महोबाकी इन मूर्तियोंके बिना अपूर्ण ही है। यहाँकी शान्तिनाथ तीर्थंकरकी दोनों मूर्तियाँ यहींकी हैं। अम्बिका, पद्मावती, यक्षियोंकी प्रतिमायें भी मात्र यहींकी हैं।

महोबाकी सन् १९०४ में यहाँ आयी जैन मूर्तियाँ जे-८२३से जे-८४६ तक हैं। ये सभी काले चमकीले पत्थरकी बनी हैं कोई भी सम्पूर्ण नहीं हैं। इनमें छह जिन मूर्तियोंकी चरण चौकियोंके अभिलेख प्रकाशित हैं।[4] इन लेखोंमें कुट्टकपुर एवं गोलापुर नामक स्थान, साधु रत्नपाल, त्रिभुवनपाल तथा रूपकार रामदेव और लषनके नाम उल्लेखनीय हैं। ये मूर्तियाँ भगवान ऋषभ, पद्मप्रभु, मुनिसुव्रत व नेमिनाथकी हैं। एक मूर्ति जे-८२८ पर जिननाथ भी उत्कीर्ण पाते हैं। वर्ष १९३५ में जी-३०४ से जी-३२३ तककी जिन प्रतिमायें इस संग्रहालयमें आयी हैं। इनमेंसे कुछके सन्दर्भ[5] को छोड़कर यहीं सर्व प्रथम प्रकाशित हो रही

१. दीक्षित, डॉ० रामकुमार; पृ० ३२।
२. राष्ट्रीय संग्रहालय, लखनऊ, संख्यक-ओ-२२४।
३. भगवान महावीर स्मृतिग्रन्थ, उ० प्र०, लखनऊ, १९७५, पृ० २३।
४. आर्किला० सर्वे०, ब्लूम, २१, १९०३-४, नार्दर्न सर्किल, पृ० ७४।
५. आर्किला० सर्वे० रिपो०, १९३६-३९, पृ० ९२, चक्रवर्ती एन० पी०।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हैं। इन जैन मूर्तियोंमें तीर्थंकर ऋषभ, शान्तिनाथ, नेमिनाथ पार्श्व एवं महावीरके अतिरिक्त नेमिनाथकी यक्षी अम्बिका एवं पार्श्वकी शासनदेवी पद्मावती, एक चौबीसी और एक त्रितीर्थी विशेष रूपसे उल्लेखनीय हैं। इन मूर्त्तियोंमेंसे आठ प्रतिमाओंके नीचे लेख खुदा पाते हैं। इनके वर्णन यहाँ प्रस्तुत हैं।

जी–३०४—यह नेमिनाथ (९२ ३४ सेमी०) की कायोत्सर्ग मुद्रामें, काले पत्थरकी प्रतिमा है। इसके नीचे उपासक एवं उपासिका हाथोंमें कमल लिये हैं। उससे ऊपर एक-एक चँवरधारीका रेखांकन है। चरण चौकीके लेखके बीचमें शंखका विलेखन है जो यह पुष्टि करता है कि यह नेमिनाथकी प्रतिमा है। इसका लेखन निम्न है : सम्वत् १२८३ आषाढ़ सुदि ८ (ज) रवौ नावरान्वये साधु आल्हभार्या प्रभतयोः पुत्रः साधु आल्हू भार्या इति पुत्र साढ देवपतेनि शंख त्वं प्रणमंति ॥

अर्थात् सम्वत् १२८३की आषाढ़ सुदि अष्टमी रविवारको नवरान्वयके साधु जाल्हकी पत्नी आदि नेमिनाथको नित्य प्रणाम करती हैं।

जी–३०५—यह ध्यानस्थ ऋषभनाथ (६६×५१ सेमी०) की मूर्ति काले पत्थरकी बनी है। इसके नीचे बैल बना है। मूर्तिका श्रीवत्स अन्य मूर्तियोंमें भिन्न प्रकारका है। इसके नीचे निम्न प्रकारका लेख है।

चित्र १. आदिनाथकी मूर्ति, महोबा, ११७१ ई०

नावरान्वये साधजीज्ञतस्य सुत सेष्ठियासार्ज्ञणिः

शीघेतस्य सुत साभु सूल्हानित्यं प्रणमति १२२८ जेष्ठसुदि १ रूपकार केल्हलः अर्थात् १२२८ जेष्ट सुदि १ को इस मूर्ति की स्थापना की गई तथा मूर्तिकार केल्हल।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जी–३२३—यह पार्श्वनाथ (९८ × ३९ सेमी०) की खड़ी काले पत्थरकी प्रतिमा है। मूल नायक पर सात फण बने हैं, इनमें प्रत्येक पर फूल बना है। प्रतिमा दिगम्बर है। पीठिका लेखके नीचे दो सर्प एक-दूसरेके सामने फण उठाये बनाये गये हैं। सर्पों एवं चँवरधारियोंका रेखांकन है। लेख इसप्रकार है :

सम्वत् १२५३ आषाढ़ सुदि ८ रवौ नावरान्वये
साधु जाल्हसंगिनीगल्हा नित्यं प्रणमति।

इन लेखोंका नावरान्वये शब्द महत्त्वपूर्ण है। इसके विषयमें डा० ज्योतिप्रसाद जैनका मत है कि **नावरान्वये** शब्दका मूल एवं शुद्ध रूप **नरवरान्वये** प्रतीत होता है। चूँकि यह शब्द उन श्रावकोंके लिये विशेष रूपमें प्रयुक्त हुआ है जिन्होने उक्त प्रतिमाओंकी प्रतिष्ठा करायी थी। इससे यह अग्रोतकान्वये, लम्बकांचुजुकान्वयादिकी भाँति किसी जाति, गोत्र या अन्वयका सूचक प्रतीत होता है। सम्भावना यह है कि इसे नरवरान्वये नामकी जैन धर्मावलम्बी वैश्य जातिका निवास इसी क्षेत्रमें स्थित प्राचीन नरवरगढ़से था जो कि जनश्रुतिके अनुसार प्रसिद्ध राजा नलकी राजधानी थी।

जी–३०६—यह पद्मासनस्थ जिन (९२ × ५३ सेमी०) की सफेद संगमरमरकी मूर्ति है। इसके लेख अस्पष्ट हैं।

जी–३०९—यह ध्यानमग्न पद्मासनासीन (६६ × ५२ सेमी०) किसी जिनकी प्रतिमा है जिसे दुग्ध-से श्वेत प्रस्तरसे बनाया गया है। पादचौकीको तीन बड़े-बड़े फूलोंसे सँवारा गया है। मूर्तिका नाक-नक्शा तीखा है। यह लेख रहित मूर्ति है।

जी–३०८—यह आसन चौकी (१ मी० × २२ सेमी०) है। इसका प्रस्तर अति हल्का मटीले जैसे रंगका है। इसे संग्रहालय पंजीमें बुद्ध प्रतिमाका आधार लिखा गया था जिसका कारण सम्भवतया यह था कि इसके बीचमें दो हिरण बने थे। किन्तु यह शान्तिनाथकी चरण चौकी है क्योंकि बाँयी ओर यक्षी तथा दाँयी तरफ यक्ष बैठे हैं। यक्षी विलासासनमें बैठी है। चतुर्भुजी यक्षीके हाथोंमें कमल, कलश, वरद एवं पुस्तक है। यह अनन्तमती यक्षीका अंकन कहा जा सकता है। नीचे लोका या शोभा खुदा है। यक्ष दो भुजी है। यह नेवला एवं श्रीफल पकड़े बैठा है। देवनागरी लिपिमें इसका लेख यहाँ दृष्टव्य है :

रूपसयरविकत्रसातिर्धसितृतसुहितस्त्र विसीस्परिस सहिकयरिकारित।

मुखा सम्वत् १३२४ सावन शनौ— ।

इससे इतना सुस्पष्ट हो जाता है कि सम्वत् १३२४ को शान्तिनाथकी मूर्तिको प्रतिष्ठित किया गया था, किन्तु आज इस मूर्त्तिका आधारमात्र ही शेष है। मूल मूर्ति भव्य रही होगी, ऐसा पाठिकाके आकार एवं आकृतिको देखनेसे प्रतीत होता है।

जी–३०९—यह काले पत्थरसे गढ़ी तथा दो हिरणोंके चिह्नोंसे युक्त शान्तिनाथ (६२ × १५ सेमी०) की प्रतिमा भी बड़ी ही लुभानी है। यहाँ इन्हें वस्त्र रहित खड़े दिखलाया गया है। ऊपर केवल वृक्ष त्रिछत्र, हाथीपर सवार विद्याधर एवं सबसे ऊपर देव दुन्दभिवादक बना है। नीचे यक्ष न बनाकर पीछी-धारी मुनि बने हैं।

जी–३१०—यह पार्श्वनाथ (४२ × २५ सेमी०) की अति हल्के मटीले रंगकी सप्तफणोंके नीचे विराजित पद्मासीन ध्यानस्थ भावपूर्ण प्रतिमा है। यहाँ चरण चौकीपर न तो सर्प बने हैं और न ही लेख खुदा है किन्तु खिले कमलका सुन्दर अंकन है। सिंह पीछेको मुह घुमाये सिंहासनका वाहन कर रहे हैं। बाँयी तरफ पुरुष अर्द्ध पर्यकासनमें बैठा है। दाँयी तरफ नमस्कार मुद्रामें उपासक तथा पीछेकी आकृतिका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मुखमात्र ही दीखता है। यहाँ चँवरधारियोंका अभाव है और उसी स्थानपर यक्षी पद्मावती एवं यक्ष धरणेन्द्रको बनाया गया है। ऊपर सर्प फणोंपर त्रिछत्र है। इससे ऊपर कमठ है तथा उसके साथ ही नीचे दोनों ही ओर आती धारायें तथा नीचे मालाधारी विद्याधर है।

जी–३१२—यहाँ अम्बिका (५० × २० सेमी०) की चतुर्भुजी बनाया गया है जो क्रमशः दर्पण, बालक, आमोंका गुच्छा, पुस्तक (आयताकार) या वाद्य जैसी वस्तु लिये है। नीचे सिंह है, एक अनुचर खड़ा है जिसके उठे हुये हाथपर बालकका पैर है। दोनों ओर उपासक-उपासिका हैं। विद्याधरके स्थानपर दोनों ओर मालाधारिणी विद्याधरी है। अम्बिकाके मस्तकपर आम्रगुच्छों सहित वृक्ष बना है। इसके ऊपर ध्यानासीन नेमिनाथ विराजमान हैं। ये ध्यानस्थ हैं। यह भूरे प्रस्तरको प्रतिमा है।

जी–३१३—यह मूर्ति पार्श्वनाथकी (८२ × २८ सेमी०) कार्योत्सर्ग मुद्रामें श्वेत संगमरमरपर बनायी गयी है। चरण चौकीको फलोंसे सजाया गया है। दोनों ओर एक-एक उपासक-उपासिका हैं। चँवरधारी त्रिभंग मुद्रामें खड़े हैं। इनके केश विन्यास, किरीट तथा मुख मुद्रा देखने योग्य है। मूल प्रतिमाके दोनों पार्श्वपर सर्पको दिखलाया है। किन्तु ऊपर सर्प फण नहीं बनाये हैं। मूल प्रतिमाकी टाँगें सीधी हैं। घुटने स्पष्ट नहीं हैं।

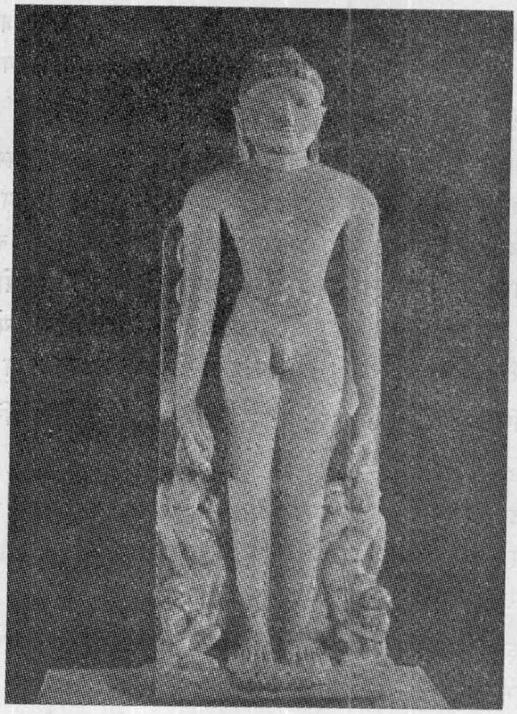

चित्र २. पार्श्वनाथ, १२०० ई०, महोबा

जी–३१५—यह त्रितीर्थी (२५ × १६ सेमी०) है। यहाँ मूलनायक ऋषभनाथ तथा ऊपर दोनों ओर एक-एक तीर्थंकर ध्यानस्थ हैं। यह सफेद प्रस्तरपर बनी है। तीनों ही जिनध्यानमग्न बैठे हैं। नीचे नरवाहना चक्रेश्वरी ऊपर यक्ष बने हैं। बाँयी तरफका चँवरधारी खण्डित है। इसपर एक लेख श्री सम्वत् ११०३ पखलस्मरो……… है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जी–३१६—इसमें पद्मावती (६० × १० सेमी०) सप्तकणोंके नीचे अर्द्ध पर्यंकासनमें बैठी है। यह चतुर्भुजी है जिनमें वह सनालपद्म, घट खण्डित तथा खिला कमल लिये हैं। पीठिकापर बाँयी-दाँयी ओर उपासक-उपासिका हैं। बाँयी ओरकी चँवरधारिणीके एक साथमें चँवर तथा दूसरेमें कमल है। दाँयी ओरकी चँवरधारिणीके एक हाथमें चँवर तथा दूसरा कट्यावलम्बित है। दोनों ही ओर मालाधारिणी तथा दाँयी ओर विद्याधरदम्पति हवामें उड़ रहे हैं तथा माला लिये हैं। यहाँ बादल (आकाश) का भी आभास दिया है। मध्यमें तीन फणोंके नीचे पार्श्वनाथ हैं जिनके दोनों ओर दो भुजी आकृतियाँ बनी हैं। देवी वस्त्रा-भूषणोंसे मण्डित है तथा उसका मुख तेज विस्तारपूर्ण है। पीछे प्रभामण्डल साटा हैं। प्रतिमा भूरे पत्थरकी है। इसपर कोई लेख नहीं है।

जी–३१८—यह खड़ी महावीर (९२ × ३२ सेमी०) की काले चमकीले पत्थरसे विनिर्मित मूर्ति है। इसके नीचे सिंह तथा प्रत्येक ओर उपासक-उपासिका सभीका रेखांकन है। इसपर निम्न लेख है :

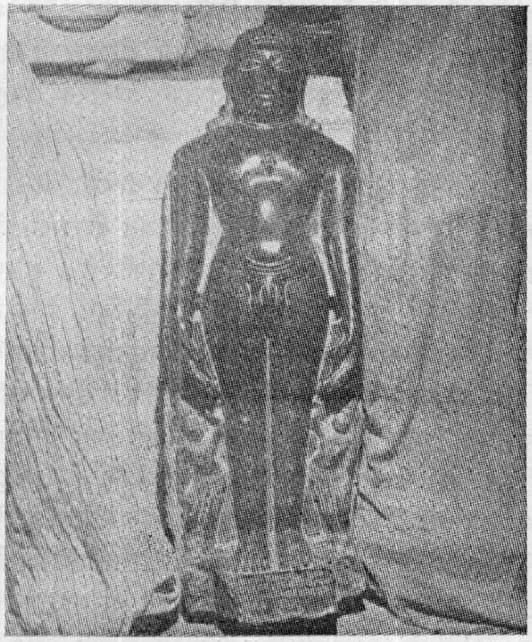

चित्र ३. महावीर, महोबा, १२२६ ई०

सम्वत् १२८३ आषाढ़ सुदि ४ खां नावरान्वये साधु आल्हपुत्र आल्हू तद्भार्या लषमा तस्याः पुत्रः सीढ़ेतस्यार्थें प्रतिमा प्रतिष्ठापिता।

अर्थात् संवत् १२८३ में लषनके पुत्रने प्रतिमा स्थापित कराई।

जी–३१९—यह किसी जिन (४२ × १५ सेमी०) की लघुत्तम प्रतिमा है जो सफेद पत्थरसे बनी है। इसपर कोई लेख नहीं। यह खड़ी प्रतिमा है जिसपर कोई भी चिह्न नहीं बना है। इसपर त्रिछत्र है और कैवल्य वृक्ष बना है। चँवरधारियोंके स्थानपर दोनों ओर एकसे सनाल कमलका अंकन है :

जी–३२० तथा जी–३२१— इन दो मूर्तियोंमें (६५ × २५; ५६ × २५) दिगम्बर जिन खड्गासनमें दर्शाये गये हैं। इनका प्रस्तर सफेद है। त्रिछत्र ऊपर बना है। बाँयी ओर गगनविहारी मालाधारी विद्याधर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दंपति हैं जिनमें पुरुष माला तथा देवियाँ वीणा लिये हैं। चँवरधारियोंके स्थानपर सनालकमल हैं। इनके लेख निम्न हैं :

जी–३२० (१) .....परिमाराय: श्रीवासवचन्द्र:[१] प्रणमति।

जी–३२१ (२) .....जिन प्रणमति नित्यं। अर्थात् वासवचन्द्र जिनकी वन्दना करता है।

जी–३२२ और ६६–२७३—यह चौबीसी (१०७ सेमी० × ७० सेमी०) भूरे पत्थरकी बनी है। इसके टुकड़ेका नं० ६६-२७३ है। इसके मूलनायक ऋषभ हैं जो खड़े हैं। इनका शिर खण्डित है। मूल मूर्ति वस्त्रहीन है। सबसे नीचे बाँयी ओर ध्यानस्थ जिन तथा दाँयी ओर नरवाहना चक्रेश्वरी प्रतिष्ठित हैं। यहाँपर यक्षीका दाँयी तरफ होना विशेष महत्त्वपूर्ण है। पीठिकापर चक्र तथा दोनों ओर सिंह बने हैं जो चरण चौकीको वाहित करते हुये बने हैं। एक सर्प फणके नीचे एक जिन दिगम्बर खड़े हैं, शेष सभी बैठे हैं। यहाँ सम्भवतया त्रिछत्रादि रहे हों किन्तु इस समय अप्राप्य ही हैं। दोनों ओरके चँवरधारी त्रिभंगी मुद्रामें खड़े हैं। इनके वस्त्राभूषण, केश, किरीट आदि विशेषरूपसे ध्यान देने योग्य हैं। इन आकृतियोंके मुख इनके विनय भावको दर्शित करनेमें बहुत ही सक्षम हैं जिससे मूर्तिकारकी निपुणताकी प्रशंसा करनी ही पड़ती है। इस निदर्शनपर लेख नहीं है किन्तु उक्त मूर्तियोंके आधारपर यह प्रतिहार कालीन प्रतीत होती है।

इस प्रकार जी–३०४ से जी–३२३ तक जैन प्रतिमाएँ है। बीचकी जी–३११, ३१४, ३१९ के विषय में कुछ भी नहीं कहा जा सकता है। सम्भव है, इनके धारक अंक अब बदल गये हों या ये अन्य संग्रहालयोंको दी गई हों। ये सारी मूर्तियाँ सम्भवतः संवत् ११०३ से १३२४ की हैं। कुछको छोड़कर सभी काले या श्वेत पत्थरसे बनी हैं। ये चन्देल एवं प्रतिहारयुगीन हैं। इन्हें जिन शिलाओंसे बनाया गया है, वह अत्यन्त कठोर शीतल, स्निग्ध, सुस्वर एवं सुगन्धिसे युक्त है। वसुनन्दि द्वारा विरचित **प्रतिष्ठासारोद्धार** शीर्षक ग्रन्थके **शिलानयण (चयन)** अध्यायमें देवविग्रहोंके निर्माणके लिए इसी प्रकारकी शिलाके चुने जानेका वर्णन है।[२] इसका उल्लेख अन्यत्र भी है।[३] सम्पूर्ण संग्रहमें ये ही कुछ मूर्त्तियाँ हैं जिन्हें किसी धातु (सिक्का, चाभी) या केवल उँगलीसे पीटनेपर धातुका-सा स्वर देती हैं। यह उनकी अपनी विशेषता है जो दर्शकको अचरजमें डाल देती है। उसे भ्रम हो जाता है और पूछता है कि क्या ये धातुकी मूर्त्तियाँ तो नहीं हैं? किन्तु प्रस्तरविदोंसे विदित हुआ कि यह प्रकृतिकी स्वाभाविक प्रक्रिया है। कभी-कभी जब पत्थर बननेकी स्थितिमें होता है, तभी यह गुण (स्वर) स्वयं उसमें आ जाता है।

अस्तु, एक ओर ये मूर्तियाँ मध्यकालीन जैन मूर्त्तियोंके अध्ययनको पूर्ण करानेमें अपरिहार्य हैं, वहीं दूसरी ओर ये ध्वनिके कारण दर्शकोंके मनको झंकृत भी करती रहती हैं। ●

---

१. जैन, डॉ० ज्योतिप्रसाद; **भार० इति० एक दृष्टि**, पृ० १९५; वासवचन्द्र कुमुदचन्द्र आदि अनेक निर्ग्रन्थ दिगम्बर साधु थे। खजुराहोके धंग चन्देलके समयके एक जैन शिलालेखमें जिन वासवचन्दका उल्लेख है, वे इस लेखके वासवचन्द्रसे अभिन्न प्रतीत होते हैं। यदि ऐसा है, तो यह प्रतिमा १०वीं शतीके मध्यकालकी स्वतः सिद्ध होती है।

२. प्रतिष्ठासारोद्धार, अ०–३ श्लोक ७८, भग० नेमिनाथ, जैन मन्दिर, चौकके शास्त्रभण्डारमें सुरक्षित हस्तलिखित पोथी, जिसे श्रीनन्दकिशोर जैनके सौजन्यसे मैं देख सका, एतदर्थ में उनका हृदयसे आभार स्वीकार करता हूँ।

३. डॉ० बालचन्द्र जैन, **जैन प्रतिमा विज्ञान**, पृ० १३।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org